P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

गाँधीजी के लोकतन्त्र सम्बन्धी विचारों की सामयिक समीक्षा

सारांश

गाँधी दर्शन और गाँधी के राजनीतिक विचारों और कार्यशैली पर जब विहंगम दृष्टि डालते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने राजनीतिक कार्यक्रमों में प्रायः 8 मुद्दों पर निरन्तर संघर्ष किया है –

"नस्लवाद के विरूद्ध, उपनिवेशवाद के विरूद्ध, जाति व्यवस्था के विरूद्ध, लोकप्रिय राजनीतिक सहभागिता के लिए, आर्थिक शोषण के विरूद्ध, स्त्रियों की दुर्दशा को सुधारने के लिए, धार्मिक और नस्लीय कट्टरता का समर्थन करने वालों के विरूद्ध तथा अहिंसात्मक साधनों के माध्यम से सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों के लिए।"

मुख्य शब्द : नस्लवाद, उपनिवेशवाद, राजनीतिक सहभागिता, नस्लीय कट्टरता, दलीय तंत्र, अहिंसा, सत्य, स्वशासन।

विजय सर्राफ
व्याख्याता एवं पर्यवेक्षिका,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

वैशाली बड़ोलिया
शोधार्थी,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

प्रस्तावना

गाँधीजी के विचारों से स्पष्ट होता है कि गाँधीजी के राजनीतिक विचारों में लोकतन्त्र के प्रति निष्ठा सर्वत्र विद्यमान है।[2] लोकतन्त्र में समाज के पिछड़े वर्ग को राजनीतिक अधिकारों तथा व्यवस्था के निर्णयों को प्रभावित करने की माँग सतत् होती रही है। गाँधीजी ने भी लोकतन्त्र में सामाजिक उत्थान के पक्ष को महत्व दिया है। वे अभिजात तन्त्रीय लोकतन्त्र तथा पंचवर्षीय मतदान प्रणाली वाले औपचारिक लोकतन्त्र के पक्ष में नहीं है। उनके लोकतन्त्र में एक ओर समाज के दलित वर्गों द्वारा पूँजीपति, कुलीन वर्गों के नियन्त्रण के विरूद्ध राजनीतिक आन्दोलन की प्रेरणा मिलती है, तो दूसरी ओर उनके आदर्श समाज की माँग भी है, जिसमें व्यक्ति को स्वशासन का पूर्ण अवसर प्राप्त हो सके। गाँधीजी के सर्वोदयी उदारवादी लोकतन्त्र में दलविहीन राजनीति के दर्शन होते हैं। उनका यह मानना रहा है कि लोकतन्त्र के स्वतन्त्र व स्पष्ट विकास में राजनीतिक दलों ने अनेक बाधाएँ उत्पन्न की हैं।[3] गाँधीजी सर्वोदय तथा अन्त्योदय की दृष्टि से ऐसे समतावादी समाज के उत्पादक हैं, जिसमें नेता तथा जनता एक ही धरातल पर सादगी एवं संयम से जनसेवा का कार्य करते रहे। उन्होंने उद्योगवाद से रहित ऐसे समाज की नींव रखी है, जिसमें स्वावलम्बन द्वारा व्यक्ति अपनी आजीविका तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।[4]

हिंसाविहीन राजनीति का सूत्रपात कर गाँधीजी ने स्वतन्त्रता, समानता तथा परोपकारिता के आदर्शों को सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में सफलतापूर्वक प्रयोग किया। वे राज्य के अवलम्बन से व्यक्ति को मुक्त कर जनजीवन में ऐसी जागृति उत्पन्न करना चाहते हैं, जिससे बाह्य आक्रमण तथा आन्तरिक विद्रोह की स्थिति उत्पन्न न हो। सविनय अवज्ञा तथा सत्याग्रह द्वारा लोकतन्त्र के मूल्यों की रक्षा करते हुए गाँधीजी ने राजनीति से गठबन्धनों तथा जोड़–तोड़ की सौदेबाजी को समाप्त कर व्यक्ति निर्णयों की शुद्धता तथा विवेकयुक्त सत्यनिष्ठा को महत्व दिया है।[5] गाँधीजी लोकतन्त्र को मिलावट विहीन अहिंसा का शासन मानते हैं। लोकतन्त्र अर्थात अहिंसा व्यक्ति की आत्मशुद्धि और नैतिक उत्थान को लिए हुए है। राजनीतिक स्वशासन, जिसमें पुरूष एवं स्त्रियों का स्वशासन अन्तर्निहित है, वे पश्चिमी देशों के लोकतन्त्रीय उदाहरण से सन्तुष्ट नहीं है, क्योंकि वहाँ शस्त्रों की होड़, साम्राज्यवाद, शोषण, पूँजीवाद, राजनीतिक अस्थिरता, भ्रष्टाचार तथा अच्छे नेतृत्व के अभाव ने सच्चे लोकतान्त्रिक मूल्यों को भुला दिया है। राज्य का अर्थिक कार्य में हस्तक्षेप राज्य शक्ति के बढ़ते हुए दायरे का प्रतीक बन व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को निगलने के लिए मुँह बाये खड़ा है। ऐसे भयावह राज्य से मुक्ति प्राप्त करने के लिए उचित नियन्त्रण व सन्तुलन ढूँढने की आवश्यकता ही गाँधीजी के लोकतान्त्रिक मूल्यों की तलाश है।[6] प्रभुत्व मतदाताओं द्वारा चुनी हुई संसद भी कुछ नहीं कर पाती है। उनका स्वार्थ और दम्भ उनके चिन्तन को संकीर्ण बना देता है। आज के

निर्णय कल बदल दिए जाते हैं। संसद के सदस्य या तो ऊँघते व आराम करते हुए दिखाई देते हैं या फिर लड़ते–झगड़ते दिखाई देते हैं। दल के लिए बिना सोचे–समझे मतदान करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को ना तो देशभक्त ही कहा जा सकता है और ना ही ईमानदार एवं अन्तःकरण से प्रेरित ही कहा जा सकता है।

मन्त्रियों व प्रतिनिधियों के साथ ही गाँधीजी ने मतदाताओं को भी आड़े–हाथों लिया है, क्योंकि मतदाता प्रायः अस्थिर चित्त के होते हैं। वे किसी भी ओछपूर्ण तथा दावत सत्कार करने वाले व्यक्ति का अनुगमन कर सकते हैं। यह सभी त्रुटियाँ पश्चिमी लोकतन्त्र में है। अतः वहाँ की सभी लोकतान्त्रिक संस्थाएँ अलोकतान्त्रिक बन गयी हैं। संसद दासता का प्रतीक राष्ट्र का खर्चीला खिलौना मात्र है, जिसमें समय तथा धन दोनों का अपव्यय होता है। अतः पाश्चात्य लोकतान्त्रिक संस्थाओं को गाँधीजी ने अपूर्ण माना है। उनका आलोचना का मुख्य आधार पाश्चात्य लोकतन्त्र में व्याप्त हिंसा तथा असत्य की स्थिति है। गाँधीजी ने अहिंसा के सिद्धान्त पर आधारित स्वराज्य की कल्पना में राज्य का स्वरूप सत्य तथा अहिंसा से ओतप्रोत लोकतान्त्रिक राज्य को माना है, जिसमें वे भ्रष्टाचार व दम्भपूर्ण व्यवहार को समूल नष्ट करना चाहते हैं, उन्होंने संख्या के स्थान पर सेवा तथा त्याग की भावना से युक्त समानता का आदर्श स्वीकार किया है और ऐसे लोकतन्त्र को जबरन विकसित नहीं किया जा सकता है। इसी कारण लोकतन्त्र की भावना बाहर से नहीं थोपी जा सकती है। इसे अन्दर से बाहर आना होता है। इसलिए गाँधीजी निर्वाचन और प्रतिनिधित्व को स्वीकार करते हैं, परन्तु मतदाता के लिए अधिक सेवा की शर्त भी स्वीकार करते हैं। विकेन्द्रित सत्ता को सार्वभौमिक मताधिकार से युक्त अनुशासित एवं राजनीतिक दृष्टि से बुद्धिमान निर्वाचकों द्वारा निर्वाचित कराना चाहते हैं।

उनकी स्वयं की मान्यता कुछ चुने हुए जनप्रतिनिधियों द्वारा जो जनता की इच्छा से हटाए भी जा सके, लोकतान्त्रिक राज्य को अनुशासित करने का है, जन प्रतिनिधियों की संख्या कम करना चाहते हैं।[7] राज्य के कार्यों को सीमित करना चाहते हैं। इसलिए गाँधीजी एक भिन्न प्रकार का लोकतन्त्र चाहते हैं और जितने गाँव की संख्या है, उतनी ही यूनिटों में शक्ति को विकेन्द्रित करना चाहते हैं। ऐसा लोकतन्त्र व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आधारित होगा और वर्तमान में प्रचलित दोषों का मुकाबला करने में सक्षम साबित होगा। गाँधीजी के अनुसार व्यक्तिगत स्वराज्य से तात्पर्य है – निःस्वार्थ, योग्य एवं निर्विकार होना। चयन के इच्छुक व्यक्ति को पदलोलुपता, आत्मप्रशंसा, विपक्ष को अपमानित करने तथा मतदाताओं का मनोवैज्ञानिक शोषण करने की वर्तमान बुराईयों से मुक्त होना चाहिए।[(8)] प्रचार के कारण मत नहीं मिलने चाहिए, अपितु अर्पित सेवा के गुण हेतु मत प्राप्त होने चाहिए। चूँकि गाँधीजी सत्याग्रही है, अतः सार्वजनिक जीवन में व्यक्ति जो सेवा तथा मानव प्रेम के कारण पद ग्रहण करता है, उसे विभिन्न प्रलोभनों से दूर रहना चाहिए। गाँधीजी के अनुसार मतदाता के लिए सम्पत्ति और शिक्षा की योग्यता प्रवर्चनापूर्ण है। शारीरिक श्रम की योग्यता ही सच्ची योग्यता का आधार है, क्योंकि शारीरिक श्रम शासन तथा राज्य की भलाई में कार्य करने के अवसर सदा के लिए प्रस्तुत करता है। श्रम पर आधारित मताधिकार राजनीति में रोजी–रोटी के सिद्धान्त के आदर्श को क्रियान्वित करता है। रोजी–रोटी के आदर्श का बुद्धिमतापूर्ण एवं जाग्रत प्रयोग मतदाता को राजनीतिज्ञों के हाथ का मोहरा नहीं बनने देता एवं व्यक्ति में स्वावलम्बन, आत्मविश्वास एवं अभय के गुणों की अभिवृद्धि होती है।[(9)]

इस तरह से निर्भय व्यक्ति ही लोकसेवा कर सकता है। इस प्रकार गाँधीजी का लोकतन्त्र एक ऐसा आदर्श लिए हुए है, जिसमें व्यक्ति, समुदाय, प्रकृति एवं परमात्मा, सबको जोड़ने का प्रयास किया गया है तथा गाँधीजी का अहिंसक राज्य एक तरह से आध्यात्मिक प्रजातन्त्र पर आधारित है, परन्तु वर्तमान में इस आध्यात्मिक प्रजातन्त्र का कोई ग्राहक दिखाई नहीं देता है। अतः भारतीय सन्दर्भ में यही कहा जा सकता है कि सार्वजनिक रूप से नागरिकों की निम्न दस समस्याएँ दिखाई दे रही हैं :–

1 बढ़ती कीमतें
2 बेरोजगारी
3 आतंक
4 सरकारी भ्रष्टाचार
5 देश की सुरक्षा की चिन्ता
6 कानून एवं व्यवस्था की चिन्तापूर्ण स्थिति,
7 राजनीतिक अस्थिरता
8 धर्म एवं जातीय समस्याएँ
9 पाकिस्तान के साथ निरन्तर युद्ध की स्थिति
10 अमेरिका के साथ सम्बन्धों की चिन्ता [10]

इन सभी चिन्ताओं के सन्दर्भ में यदि गाँधीजी के चिन्तन के विभिन्न पहलुओं को स्वीकार किया जाये तो शायद कोई समस्या सुलझाव का रास्ता प्रशस्त हो सकता है, परन्तु भारतीय सन्दर्भ में गाँधीजी के रास्ते को कितना अपनाया गया व परखा गया। इससे प्रबुद्ध भारतीय अपरिचित नहीं है। सच्चाई तो यह थी कि जबसे देश को आजादी मिली थी, तबसे बहुत सारे भारतीयों ने इसके अस्तित्व को स्वाभाविक तौर पर देखा था तो कुछ ने (राष्ट्रवादियों ने) इसके बारे में भय के साथ लिखा या बयान दिए थे। बहुत सारे लोगों (अलगाववादी या क्रांतिकारी) ने इसे उम्मीदों के साथ देखा था। अपने विदेशी समकक्षों की ही तरह वे भी यह मानने लगे थे कि यहां की जमीन एक राष्ट्र के अस्तित्व में बने रहने के हिसाब से ज्यादा ही विविधता लिए हुए है और एक लोकतंत्र के फलने–फूलने के हिसाब से बहुत ही गरीब[(11)] परन्तु जब तक भारत की जनता थोड़ी धार्मिक विश्वासों वाली है, त्याग के आदर्श को मानती है और हर स्थिति में अपने को कर्म नियोजित करने को तत्पर है, तब तक गाँधीजी के लिए यही कहा जायेगा कि गाँधीवाद चिरायु हो! अन्यथा उनके विचार और कार्यप्रणाली की प्रासंगिकता पर नित नये प्रश्न चिन्ह लगते रहेंगे। अतः गाँधीजी का विरोध या समर्थन कोई भी व्यक्ति अपनी रिस्क पर ही करेगा।[(12)] वर्तमान समय में लोकतन्त्र की तानाशाही इतनी विकृत हो गई है कि सामान्य जन उनसे कतराने लगता है। सेना और पुलिस से तो जनता सम्पर्क ही नहीं रखना चाहती, क्योंकि वे जनता के सेवक नहीं, स्वामी की तरह

व्यवहार करते हैं। इससे लोकतन्त्र कुण्ठित हो गया है। समाज में आपसी सद्व्यवहार के स्थान पर कटुता आ गयी है। समाज दो भागों में विभाजित हो गया है – (1) जन सामान्य, (2) अभिजन। अभिजन जो अपने आपको इस समाज का सर्वेसर्वा मानता है, वह सामान्य जनता के साथ उचित व्यवहार नहीं करता।

गाँधीजी का लोकतन्त्र इसके विपरीत है। यद्यपि उन्होंने माना कि व्यक्तियों के आचरण में किसी न किसी रूप में हिंसा विद्यमान रहने के कारण एक सीमा तक बल प्रयोग की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता, किन्तु अहिंसक लोकतन्त्र में बल प्रयोग की संभावना को न्यूनतम किया जाएगा। इस अवस्था में पुलिस और सेना जनता के सेवक के रूप में कार्य करेंगे और वे स्वयं भी अहिंसा के सिद्धान्त में आस्था रखेंगे। उन्हें अहिंसा के आचरण के लिए प्रशिक्षित भी किया जाएगा। अहिंसा के आदर्श से प्रेरित जनता भी कानून और व्यवस्था तथा बाहरी आक्रमणों से देश की रक्षा के कार्यों में उनसे स्वाभाविक सहयोग करेगी। अतः पुलिस और सेना को बल प्रयोग की आवश्यकता सामान्यतः अनुभव ही नहीं होगी। इस व्यवस्था में पुलिस के पास थोड़े से हथियार होंगे, किन्तु उनका प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं के बराबर होगी। सेना भी प्रवृत्ति से अहिंसक होगी और उसे अहिंसक युद्ध के लिए प्रशिक्षित भी किया जाएगा। शान्ति और अशान्ति दोनों ही स्थिति में सैनिक सक्रिय रहेंगे। शान्तिकाल में वे ऐसे रचनात्मक कार्यों में लगे रहेंगे, जिससे समाज में कलह और कटुता की संभावनाएँ ही समाप्त हो जाएगी। समाज में यदि कोई कलह अथवा दंगा हो अथवा असामाजिक तत्व सक्रिय हो, सामान्य सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था में अवरोध उत्पन्न करने का प्रयास करें तो सैनिकों का कर्त्तव्य संघर्ष में लिप्त पक्षों के मध्य सुलह कराने के लिए प्रयत्न करना होगा, भले ही इस प्रक्रिया में स्वयं सैनिकों को दंगा करने वालों की क्रोधाग्नि में क्यों न जल जाना पड़े।[13]

लक्ष्य की दृष्टि से गाँधीजी ने अहिंसक प्रजातन्त्र का आदर्श सर्वोदय सबका कल्याण माना है। उनके अनुसार यह लोकतन्त्र बहुमत और अल्पमत के हितों को पृथक–पृथक नहीं मानेगा, अपितु ऐसे वातावरण का निर्माण करेगा, जिसमें अल्पमत और बहुमत के हितों के मध्य कोई भेद नहीं रहेगा। इस व्यवस्था में शासन सबसे कमजोर व्यक्ति के हितों की सुरक्षा को भी सर्वोपरि महत्व देगा। कमजोर और दलित निम्न वर्गों का उत्थान इस शासन व्यवस्था का सर्वोपरि ध्येय होगा, ताकि सर्वांगीण विकास की व्यवस्था बनी रहे। इस लोकतन्त्र की प्रेरणा बन्धन के उपयोगितावादी आदर्श "अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम सुख" से नहीं, अपितु समस्त मानवों का श्रेष्ठ कल्याण होगा। व्यक्तियों के सर्वकल्याण की परिधि में नैतिक, सामाजिक, आर्थिक व सामाजिक कल्याण शामिल होंगे। गाँधीजी ने लोकतन्त्र को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा है कि केवल लोकतान्त्रिक प्रक्रियाएँ ही शासन के लोकतान्त्रिक होने का मापदण्ड नहीं होता, अपितु लोकतान्त्रिक भावना की अभिव्यक्ति तो उन आदर्शों में होती है, जिनके लिए शासन सक्रिय और प्रयत्नशील रहता है। अतः अहिंसक लोकतन्त्र बहुमत या अल्पमत का शासन नहीं, अपितु न्याय का शासन होगा।

इस व्यवस्था में शासन द्वारा मनमाने निर्णय लेने की संभावना नहीं होगी, क्योंकि न्याय और विधि के शासन का विचार शासन की समस्त संस्थाओं को अनुप्राणित करेंगे और ये विधि निर्माण तथा कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग के औचित्य के मापदण्ड माने जायेंगे।[(14)]

वर्तमान भारतीय समाज पाश्चात्य सभ्यता से अत्यधिक प्रभावित है, परन्तु आधुनिक भारतीय सभ्यता का संकट यही है कि इसका गतित्व समाप्त हो चुका है, किन्तु नवीन सभ्यता शिशु का अब तक जन्म नहीं हो सका है। शायद यह इसकी प्रसव वेदना का काल है। ओसवाल्ड स्पेगलर, डेनिलवस्की, अर्नल्ड टायनबी आदि मतों को उद्धृत करते हुए ए.एल. क्रोवर ने आधुनिक सभ्यता की जन्म कुण्डली स्थित कालचक्र के अनुसार यह भविष्यवाणी कर दी है कि इस सभ्यता का अन्त 21वीं सदी के मध्य तक सुनिश्चित है। जब किसी तत्वज्ञान या सामाजिक संरचना का सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो जाता है तो वह जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से अनुबंध नहीं रखने के कारण सामाजिक क्रान्ति का उपकरण नहीं बन सकता।

इसी वैश्विक संदर्भ में दादा धर्माधिकारी ने सर्वोदय के सांस्कृतिक आधार की प्रस्तुति में तीन बिन्दुओं को रखा है –

1. शास्त्र का सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो गया है।
2. यंत्र का सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो गया है।
3. प्रचलित लोकतन्त्र का सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो गया है।

सर्वोदय का आधार एवं स्वरूप सांस्कृतिक है और हमारा संकट भी सांस्कृतिक है। अतः सर्वप्रथम हमें सांस्कृतिक मूल्यों के परीक्षण के लिए एक कसौटी तय करनी होगी। सामाजिक जीवन की प्रतिष्ठा को हम मूल्य कहते हैं। प्रमाणिकता उसका पहला लक्षण है और उसकी कसौटी है – "अपने जैसा दूसरों को जानना" अर्थात् मैं अपने लिए जो करूंगा, वह दूसरों के लिए करूंगा और पहला कदम मैं उठाऊँगा। कोई दूसरा पहला कदम उठाए, इस बात का इंतजार मैं नहीं करूंगा। इसी को हम "फल निरपेक्ष कर्त्तव्य" कह सकते हैं, जिसे कांट ने Categorical Imperative या गीता में अनासक्त कर्म की संज्ञा दी है। उपयोगितावादी दृष्टिकोण से ऐसा कर्म भले ही व्यर्थ दिखे, लेकिन स्वायत्त जीवन की फल निरपेक्षता इसलिए व्यर्थ नहीं जा सकती है, क्योंकि फल निरपेक्षता का अर्थ है कि फुटकर फलों की आशा छोड़कर अंतिम फल की आशा करना यानि व्यापक अभिलाषा का नाम ही निराभिलाषा है। जब स्वार्थ परार्थ से आगे बढ़ जाता है तो परमार्थ हो जाता है। उसी तरह जब व्यक्ति का कल्याण, सभी के कल्याण का पर्याय बन जाता है, तो वह सर्वोदय कहलाता है। जो तात्कालिक और व्यक्तिगत सुख के लिए अपने चरम सुख के साथ समझौता कर लेता है, वह सुधारवादी हो सकता है, क्रान्तिकारी नहीं।

जीवन को समझने के लिए हमें जीवन मूल्यों को समझना होगा। दादा धर्माधिकारी ने जीवन मूल्य के पाँच लक्षण बताए हैं :– (1) प्रमाणिकता, (2) सार्वत्रिकता, (3)

निरपेक्षता (4) स्वतः प्रमाणयता, एवं (5) स्वभाव की अनुरूपता। मूल्यों के परिवर्तन से ही जीवन परिवर्तन और समाज परिवर्तन संभव है। वृत्ति में परिवर्तन होने पर ही मूल्यों की स्थापना होगी। सर्वोदय दर्शन का उद्देश्य सुस्पष्ट है। उस उद्देश्य के अनुरूप साधन की अवधारणा भी साफ है।[(15)] हम शुरूआत के तौर पर अहिंसक लोकशक्ति के संगठन के लिए शान्ति सेना या अहिंसा वाहिनी सेना का व्यापक संगठन करें। यह तो आवश्यक है, लेकिन इसमें भी अधिक जरूरी है कि शान्ति या शिक्षा में अहिंसक क्रांति पर अमल करें। आज हमारा संस्कार ही हिंसक हो गया है। इसका परिष्कार कोई राजनेता या मठाधीश पण्डा या पुजारी नहीं कर सकता, वह तो सम्यक शिक्षा व्यवस्था से ही संभव है। आज की शिक्षा में न जीवन है न जीविका की गारण्टी। ऐसी स्थिति में इस शिक्षा से समाज का नेतृत्व पाने की आशा ही एक मृग–मरिचिका है। आजादी के बाद अराजक पुलिस या अर्द्धसैनिक व्यवस्था पर लगभग 500 गुना खर्च बढ़ा है और उसी अनुपात में अपराध भी बढ़े हैं। स्पष्ट है कि यह तरीका निकम्मा और बेकार है। आतंकवाद का उत्तर गाँधी हैं, जिसने चम्पारन में किसानों के लिए खेड़ा एवं बारडोली में अन्याय के खिलाफ, दक्षिण अफ्रीका और भारत में रंगभेद और अस्पृश्यता के खिलाफ तथा अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरूद्ध युद्ध किया। गाँधीजी ने 1908 में लन्दन से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज पर ही "हिन्द स्वराज्य" नामक एक छोटी सी किताब लिख डाली थी। उनकी दृष्टि में यह हिंसा को समर्थन कर देने वाली भारतीय विचारधारा के प्रतिवाद के रूप में लिखा गया ग्रन्थ है। आखिरी समय में भी वे सम्प्रदायवाद से जूझते हुए मरे। आतंकवाद के लिए गाँधीजी की निष्ठा एवं उनका आत्मबलिदान चाहिए।[16]

हमें अपनी शिक्षा व्यवस्था में भी सुधार करना चाहिए। शिक्षा में हमने शान्ति और अहिंसा के तत्व को शामिल नहीं किया है। शिक्षा मानव मन और मानव संस्कार को ठीक करती है। दुर्भाग्य है कि हम धनुर्वेद और सैनिक विज्ञान को शिक्षा शास्त्र में प्रतिष्ठित स्थान देते हैं, परन्तु शक्ति शोध अहिंसा विज्ञान को अनावश्यक और अनुपयोगी मानते हैं। महावीर और बुद्ध, गाँधी और विनोबा के देश में 234 विश्वविद्यालय में से मात्र 10 विश्वविद्यालयों में गाँधी विचार और अहिंसा का छोटा–मोटा पाठ्यक्रम है। जबकि यूरोप और अमरीका में लगभग 2000 शान्ति शोध के संस्थान हैं। आज देश में लगभग 10 हजार कॉलेज हैं, पर प्रायः सभी जगहों पर प्रसार कार्य के रूप में सैनिक प्रशिक्षण (राष्ट्रीय सैन्य प्रशिक्षण, एन.सी.सी.) है, लेकिन शान्ति सेना का प्रशिक्षण बेकार समझा जाता है। आज तो विश्वविद्यालय के परिसर में हिंसक उपद्रवों के शमन के लिए बन्दूकधारी स्थायी सुरक्षा सैनिक रखे जाते हैं। यदि हिंसा और आतंकवाद का प्रशिक्षण दिया जाता है तो कलह, शमन और शान्ति का भी प्रशिक्षण देना होगा। इसलिए अहिंसा का अध्ययन शोध तथा प्रशिक्षण जरूरी है। हमने प्रशिक्षण एवं शान्ति प्रसार का कार्य केवल साधु–सन्तों पर छोड़ दिया है, जो प्रायः साम्प्रदायिकता, भेदभाव, अपने वर्चस्व को बनाये रखने में अपनी श्रेष्ठता समझते हैं। विश्व धर्म और विश्व नैतिकता, विश्व झाँकी का आधार है। धर्मान्तरण के द्वारा सम्प्रदाय विस्तार भी धार्मिक साम्राज्यवाद का ही रूप है। भूमण्डलीकरण के नाम पर विकासशील देशों के शोषण वस्तुतः आक्रमणपूर्ण युद्ध है। इसी प्रकार पूँजीवादी या साम्यवादी, वैश्विक ईसाइयत या विश्व हिन्दुत्व या अखिल इस्लामियत की भावना और योजना विश्व शान्ति की बाधक है। यह 'अहिंसा परमो धर्मः' का आचरण करते हैं, परन्तु वास्तव में 'हिंसा परमो धर्मः' का आचरण करते हैं।[17]

गाँधीदर्शन और हमारा समाज इन दिनों विश्व को अहिंसा का नया सृजन फलक प्रदान कर रहा है। इसी केनवास के जरिये हम विश्व को शान्ति के एक नये झरोखे द्वारा देख सकते हैं एवं गाँधी दर्शन की एक नई व्याख्या से रूबरू हो सकते हैं। आतंक बिखराव और दहशत से जूझते हुए विश्व को इन दिनों गाँधी दर्शन और उनका अहिंसा का प्रयोग सूत्र ही एकमात्र चिराग है, जो इस विश्व को एक नया रास्ता दिखा सकता है। इस नई सदी में गाँधीजी के दर्शन की नयी परिभाषा की जा सकती है। आज प्रश्न यह भी उठाया जा रहा है कि क्या गाँधी दर्शन इस नयी सदी के बदलते हुए परिदृश्य में भी इतना ही प्रासंगिक है, जितना पहले था।

साहित्यावलोकन

प्रसाद, नागेश्वर (सम्पा0); "हिन्द स्वराज : ए फ्रेश लुक", गाँधी पीस फाउण्डेशन, नई दिल्ली & "It is in this perspective that Gandhi's critique of modern civilization becomes understandable. It is also in this perspective that Gandhi's branding of modern civilization as "Satanic" makes sense."

नागर, पुरूषोत्तम;"आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक चिन्तन", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर – "प्रस्तुत पुस्तक में राजा राममोहन राय से लेकर राम मनोहर लोहिया तक के विभिन्न राजनीतिज्ञों, विचारकों, समाज सुधारकों एवं क्रांतिकारियों के सिद्धान्तों और विचारकों का सप्रमाण विवेचन किया गया है। यह मूलतः भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम एवं तज्जनित नवचेतना का सुफल है। जहाँ एक ओर आधुनिक युग की सामाजिक एवं राजनीतिक विश्वव्यापी मान्यताओं को पाश्चात्य संसर्ग के कारण आत्मसात् करने वाले भारतीय मनीषी चिंतकों ने भारतीय परिवेश में उन्हें यथाशक्ति साकार करने का प्रयत्न किया है तो दूसरी ओर परम्परारूढ़ चिंतकों ने भारतीय परिवेश में व्याप्त सामाजिक, राजनीतिक तथा अन्य प्रकार के विचार बिन्दुओं का अवलम्बन लेकर चिंतन के अविरल प्रवाह को बनाए रखा है।"

डगलस, ऐलन; "द फिलॉस्फी ऑफ महात्मा गाँधी फॉर द 21 सेनच्यूरी" (21वीं सदी के लिए महात्मा गाँधी का दर्शन परिचयात्मक अध्याय), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008 – "In this volume the author present numerous ways in which Gandhi's thought and action-oriented approach are significant, relevant and urgently needed for addressing the major problems and concern of the twenty-first century."

गाँधी, एम.के.; "हिन्द स्वराज और इण्डियन होम रूल", नवजीवन प्रकाशन हाउस, अहमदाबाद – "In the book Gandhi gives a diagnosis for the problems of

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

humanity in modern times, the causes and his remedy."

चतुर्वेदी, मधुकर श्याम;"प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक", कॉजेज बुक हाउस, जयपुर, 2001 – "यह पुस्तक कोटा विश्वविद्यालय में पाठ्यपुस्तक के रूप में चलती है। इसमें गाँधीजी का पूरा एक अध्याय है, जिसमें गाँधीजी के लोकतंत्र सम्बन्धी विचारों की व्याख्या की गई है।"

रत्तू, डॉ. कृष्णकुमार एवं डॉ. कमला;"समग्र गाँधी दर्शन, गाँधी चिन्तन और वर्तमान प्रसंग", आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2009 – "यह सभी प्रकार के विद्यार्थियों व आम जन के लिए उपयोगी पुस्तक है एवं इसके अध्ययन से गाँधीजी के विचार व उनकी प्रासंगिकता के बारे में जानने में सहायता मिलती है।"

चक्रवर्ती, विद्वुत;"सोशल एण्ड पोलिटिकल थ्योरी ऑफ महात्मा गाँधी", लन्दन रॉडलेज, 2006 – "प्रमुख राजनीतिक विचारकों में डॉ. कृष्ण कुमार व डॉ. कमला विधुत चक्रवर्ती ने गाँधी दर्शन पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं जो शोध के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।"

गुहा, रामचन्द्र; "भारत गाँधी के बाद, दुनिया के विशालतम लोकतन्त्र का इतिहास", पेंगुइन बुक्स, 2016 – प्रस्तुत पुस्तक आजादी से पहले भारत की स्वतन्त्रता और आजादी के बाद के भारत को गाँधी के लोकतन्त्र सम्बन्धी विचारों और भारत के तत्काल विखंडन या इसके अराजक स्थिति में पहुँच जाने या किसी तानाशाह (भ्रष्टाचार) के चंगुल में फंस जाने की भविष्यवाणी की ओर ध्यान आकृष्ट करती है।

निष्कर्ष

आज इस ग्लोबल संसार के सामने जो विश्व स्तरीय चुनौतियाँ हैं, उन्हें देखते हुए गाँधी दर्शन आज भी उतना ही स्वीकार्य है, जितना पहले था, शायद उससे भी कहीं ज्यादा। गाँधी दर्शन की इस प्रासंगिकता को दर्शाते हुए लेखक जनार्दन द्विवेदी का मानना है कि पिचहत्तर साल पहले आधुनिक विश्व के दो असाधारण पुरूषों ने अपने–अपने देश में जनक्रान्ति का नेतृत्व किया। दोनों ही के अपने अलग–अलग विचार थे। वे अपने देश व विश्व को एक नये रास्ते पर ले जाना चाहते थे। जहाँ सभी प्रकार के शोषण और दमन से मुक्ति हो, हालाँकि उनके लक्ष्य कमोबेश समान थे, लेकिन उन्हें प्राप्त करने का रास्ता और तरीका बिल्कुल भिन्न था। वे दोनों आत्म बलिदान और सादगी की प्रतिमूर्ति थे। वे महापुरूष थे – गाँधी और वी.आई. लेनिन।[18]

आज गाँधी दर्शन की प्रासंगिकता शायद पहले से अधिक महसूस होने लगी है। विश्व के वैश्वीकरण के चलते गाँधी आज पहले से ज्यादा प्रासंगिक हो गये हैं। आज पूरी दुनिया पर परमाणु युद्ध का खतरा मण्डरा रहा है। इस स्थिति में गाँधी दर्शन एक शक्ति कवच के रूप में हमारे सामने आ रहा है। आज पूरे विश्व में गाँधी दर्शन को एक नये नजरिये से देखने का प्रयोग किया जा रहा है। गाँधी दर्शन इसकी सामयिक परिभाषा बताता है, जो शान्ति में निहित है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *डगलस, ऐलन; "द फिलॉस्फी ऑफ महात्मा गाँधी फॉर द 21 सेनच्यूरी" (21वीं सदी के लिए महात्मा गाँधी का दर्शन परिचयात्मक अध्याय), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008, पृ.सं. VIII*
2. *नागर, पुरूषोत्तम;"आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक चिन्तन", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2000, पृ.सं. 382*
3. *नागर, पुरूषोत्तम;"आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक चिन्तन", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2000, पृ.सं. 383*
4. *जोली, सुरजीत कौर;"गाँधी एक अध्ययन", सम्पादित कान्सैप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2007, पृ.सं. 78*
5. *जोली, सुरजीत कौर;"गाँधी एक अध्ययन", सम्पादित कान्सैप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2007, पृ.सं. 326*
6. *गाँधी, एम.के.; "हिन्द स्वराज और इण्डियन होम रूल", नवजीवन प्रकाशन हाउस, अहमदाबाद, 1938, पृ.सं. 13*
7. *नागर, पुरूषोत्तम;"आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक चिन्तन", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2000, पृ.सं. 384*
8. *चक्रवर्ती, विद्वुत;"सोशल एण्ड पोलिटिकल थ्योरी ऑफ महात्मा गाँधी", लन्दन रॉडलेज, 2006, पृ.सं. 24*
9. *प्रसाद, नागेश्वर (सम्पा0); "हिन्द स्वराज : ए फ्रेश लुक", गाँधी पीस फाउण्डेशन, नई दिल्ली, 1385, पृ. सं. 1*
10. *राजेश एण्ड बसरूर;"चेलेन्जेज टु डेमोक्रेसी इन इण्डिया", ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 2009, पृ. 191*
11. *गुहा, रामचन्द्र; "भारत गाँधी के बाद, दुनिया के विशालतम लोकतन्त्र का इतिहास", पेंगुइन बुक्स, 2016, पृ.सं. xvi*
12. *नायडू, एम.वी.; "द एनेटोमी ऑफ नॉन वाइलांट रिजोल्यूशन : ए कम्पेरेटिव एनेलिसिस" ("द फिलॉस्फी ऑफ महात्मा गाँधी फोर द 21 सेन्च्यूरी" एलन डगलस द्वारा सम्पादित), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008, पृ.सं. 244*
13. *चतुर्वेदी, मधुकर श्याम;"प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक", कॉजेज बुक हाउस, जयपुर, 2001, पृ.सं. 354*
14. *चतुर्वेदी, मधुकर श्याम; पूर्वउद्धृत, पृ.सं. 355*
15. *सिंह, रामजी;"गाँधी और मानवता का भविष्य", कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, 2008, पृ. 12*
16. *सिंह, रामजी; पूर्वउद्धृत, पृ.सं. 53*
17. *सिंह रामजी; पूर्वउद्धृत, पृ.सं. 56*
18. *रत्तू, डॉ. कृष्णकुमार एवं डॉ. कमला;"समग्र गाँधी दर्शन, गाँधी चिन्तन और वर्तमान प्रसंग", आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2009, पृ.सं. 23*